आधुनिक सभ्यता का विकल्प

आशुतोष कुमार मिश्र

कला, साहित्य एवं संस्कृति के हल्के में एक मजबूत युवा सक्रियता के रूप में जाने जाते हैं। आलोचना, नाटक, फिल्म, टेलीफिल्म के लेखन के साथ ही नाटकों में अभिनय एवं निर्देशन में अपनी छाप और दखल रखते हैं।

> *''यह साबित करने की जरूरत नहीं है कि जो विचार मैं पाठकों के सामने रखता हूं, वे हिन्दुस्तान में जिन पर (पश्चिमी) सभ्यता की धुन सवार हुई है ऐसे बहुतेरे हिन्दुस्तानियों के हैं, यह मैं अपने पाठकों के मन में अपने सबूतों से ही जांचना चाहता हूं। जिसे इसकी खोज करनी हो, जिसे ऐसी फुरसत हो, वह आदमी वे किताबें देख सकता है।''*
>
> ('हिन्द स्वराज' की प्रस्तावना से)

'हिन्द स्वराज' गांधी विचार और दृष्टि को समग्रता में समझने का एक महत्वपूर्ण जरिया है। यह पूरे बदलाव की एक पूरी किताब है। हिंसा और आतंक में डूबी हुई इक्कीसवीं सदी मनुष्य के विवेक के समक्ष एक चुनौती है। आधुनिकता के 'साइड इफैक्ट' के रूप में उपजी विसंगतियां यानि चरम बौद्धिकता, संवेदनहीनता, तनाव, सर्वग्रासी यांत्रिकीकरण, कहीं चरम समृद्धि तो कहीं चरम अभाव, खंडित चेतनायुक्त मनुष्य, साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद और पश्चिम के वैज्ञानिक प्रभुत्व से आज सबको जूझना पड़ रहा है। इन समस्याओं का समाधान पाने के लिए उस धरातल को समझना जरूरी है जहां से इनके सूत्र जुड़े हुए हैं। गांधी जी इन तमाम समस्याओं की जड़ 'आधुनिक सभ्यता' को मानते हैं।

इसी 'आधुनिक सभ्यता' की पहली व्यवस्थित और तार्किक समीक्षा है 'हिन्द स्वराज'। इसमें समस्याओं के विश्लेषण के साथ ही भ्रमित मानसिकता और अपरिपक्व विचारों के बरक्स एक ठोस और बुनियादी दृष्टि की नींव रखी गयी है।

'हिन्द स्वराज' इग्लैण्ड से वापस आते समय 'किल्डोनन कौंसिल' जहाज पर गुजराती में

लिखी गयी थी। जो दक्षिण अफ्रीका पहुंचने पर 'इंडियन ओपिनियन' के दो अंकों: 11-12-1909 और 18-12-1909 में छपी। पुस्तक के रूप में पहली जनवरी 1910 में प्रकाशित हुई। उसके साथ ही 'हिन्द स्वराज' पर व्यापक चर्चा शुरू हो गयी।

'हिन्द स्वराज' के प्रचार से घबरा कर 24 मार्च 1910 को बम्बई सरकार ने इसके प्रचार पर प्रतिबंध लगा दिया। सरकार ने 'हिन्द स्वराज' के साथ कुछ अन्य रचनाएं भी प्रतिबंधित की थीं। इस जब्ती पर गांधी जी की टिप्पणी इस प्रकार थी – *''बम्बई सरकार द्वारा 24 मार्च के 'गजट' में यह सूचना प्रकाशित की गयी है कि इंटरनेशनल प्रिण्टिंग प्रेस में छपे 'हिन्द स्वराज', 'सर्वोदय', 'मुस्तफा कामेल पाशा का भाषण' और 'सुकरात का प्रतिवाद' तथा 'एक सत्यवीर की कथा' सम्राट की सरकार द्वारा जब्त कर लिए गये है; क्योंकि इसमें ऐसी सामग्री है जो 'राजद्रोहात्मक' घोषित की गयी है।''*[1]

गांधी जी सरकार द्वारा जब्त की गयी इन किताबों के बारे में एक पुष्ट विचार रखते हैं। गोया यह कि ये किताबें विभिन्न प्रयोगों और विचारों के रूप में पहले ही आ गयी थीं, तो इस पर प्रतिबंध लगाने का क्या मतलब है! साथ ही वे इन किताबों की निर्दोष विषयवस्तु के बारे में स्पष्ट करते हैं : *''हिन्द स्वराज', 'इंडियन होमरूल' हमारे पाठकों के सामने है। 'सर्वोदय' रस्किन के 'अन टु दि लास्ट' का गुजराती रूपांतर है। 'मुस्तफा कामेल पाशा का भाषण' उस भाषण का गुजराती अनुवाद है जो मिस्र के इस देशभक्त ने अपनी मृत्यु के पहले काहिरा की एक विराट सभा में दिया था। प्लेटो की अमर कृति का गुजराती रूपांतरण। यह सत्याग्रह की अच्छाई और असली भावना को समझने के लिए प्रकाशित किया गया है।''*[2]

अपनी टिप्पणी में गांधी जी ने स्पष्ट कर दिया था कि सत्याग्रह की अच्छाई और असली भावना को समझने के लिए ये किताबें प्रकाशित की गयी थीं। अंग्रेज सरकार को इसी अच्छाई और असली भावना से भय था। एक खास बात यह कि इन किताबों से गांधी जी का दायरा पता चलता है। जिन बातों से गांधी जी की समझ बन रही थी उसमें सुकरात प्लेटो से लेकर टॉलस्टाय और मुस्तफा कामेल पाशा तक के विचार हैं। एक तरह से यह गांधी जैसे 'विश्वपुरुष' के निर्माण की 'वैश्विक पद्धति' थी।

अपने प्रकाशनों के जब्त होने पर सरकार के प्रति जो भाव गांधी जी ने व्यक्त किया वह 'इंडियन ओपिनियम (7.5.1910) में इस प्रकार प्रकाशित हुआ : *''परंतु इन जब्तियों पर हमें शिकायत करने का कोई अधिकार नहीं है। भारत सरकार की इस मनोदशा को हम अस्थायी मानते हैं। जिसमें थोड़ा बहुत विचार स्वातंत्र्य भी हो वह ऐसे साहित्य के प्रचार को रोकना चाहती है। निश्चय ही उत्साह की यह अधिकता अपने आप ठंडी पड़ जायेगी।... हिंसात्मक तरीकों को रोकने के लिए सरकार की चिन्ता से हमें सहानुभूति है। इसके लिए हम भी बहुत कुछ करना और योग देना चाहेंगे, परंतु हम तो इस बीमारी को रोकने का केवल एक मार्ग जानते हैं, और यह वह है कि सत्याग्रह के सही तरीके का प्रचार किया जाये। दूसरे सब मार्ग और विशेष रूप से दमन, आगे चल कर अवश्य ही असफल होंगे।''*[3]

इस टिप्पणी में गांधी जी का जो 'निश्चय' है वह महत्वपूर्ण है कि 'दमन आगे चल कर अवश्य ही असफल होंगे'। अपने रास्ते के प्रति यही वह विश्वास है जो गांधी को 'गांधी भाव' की उपलब्धि कराता है। साथ ही गांधी जी अंग्रेजी सरकार की मनोवृत्ति पहचान रहे थे। अपने शासक की मनोवृत्ति की इतनी साफ पकड़, वह भी 1910 में, महत्वपूर्ण है। बकौल फिराक–

फिराक अक्सर बदल कर भेष फिरता है कोई काफिर,
कभी हम जान लेते हैं कभी पहचान लेते हैं।

गांधी जी ने उस खतरे को पहचान लिया था और उस खतरे से निकलने के लिए सम्पूर्ण तैयारी के साथ उतर रहे थे। उनको अपनी तैयारी पर पूरा यकीन था। उनका उद्देश्य यही था कि

सत्याग्रह के सही तरीके का प्रचार किया जाय। उसी सही तरीके के लिए गांधी जी ने 'हिन्द स्वराज' किताब लिखी। किताब के प्रस्तावना में गांधी जी ने तीन उद्देश्यों का उल्लेख किया हैः (1) देश की सेवा करना (2) सत्य की खोज करना तथा (3) उसके मुताबिक बरतना। अपने उद्देश्य की प्राप्ति की इस प्रक्रिया में गांधी जी ने जाना कि संकट के मूल में 'आधुनिक सभ्यता' है। एक ऐसी सभ्यता जो मनुष्य को औजार और मनुष्यता को उत्पाद की तरह बरत रही है। तकनीक आधारित विकास की धारण ाा और आधुनिक सभ्यता से पोषित जीवनशैली को गांधी जी प्रश्नांकित करते हैं। अपनी धारणा स्थिर करते हुए कहते हैं : *"दोष उनका नहीं बल्कि यूरोप की आधुनिक सभ्यता का है। वह सभ्यता तो वास्तव में असभ्यता है और उससे यूरोप की जनता बरबाद होती जा रही है। इस सभ्यता की सच्ची पहचान तो यह है कि इसे स्वीकार करने वाले लोग भौतिक खोजों और शरीर सुखों में सार्थकता और पुरुषार्थ मानते हैं।... यंत्रीकरण की प्रक्रिया तेज होती जा रही है। एक बटन दबाने भर से सब कुछ उपलब्ध होगा। मनुष्य को हाथ पैर हिलाने की जरूरत नहीं रहेगी। जो पहले नहीं थे अब ऐसे रोग पैदा हो गये हैं और लोग अनुसंधान करने में लगे हैं कि (सभ्यता से उत्पन्न) उन रोगों को कैसे मिटाया जाये।"*[4]

'हिन्द स्वराज' में सौ साल पहले जो सवाल उठाये गये थे, वे आज भी समकालीनता को व्याख्यायित करने में सहायक हैं। जैसे कांग्रेस, बंगाल का बंटवारा, असंतोष और अशांति, स्वराज क्या है?, इंग्लैण्ड का हाल, हिन्दुस्तान कैसे गया, हिन्दु और मुसलमान, भारत की दशा, भारत को आजादी कैसे मिले, इटली और भारत, पाशविक शक्ति, सत्याग्रह, शिक्षा, मशीन, सभ्यता क्या है?; ये सारे सवाल एक सचेत मनुष्य के भीतर अपने समय के दबावों से उपजे हैं। इनसे से कुछ को छोड़ कर अधिकतर उसी तरह जरूरी हैं।

इनमें सभ्यता का सवाल महत्वपूर्ण है। एक तरह से कहा जा सकता है कि सभ्यता की गलत व्याख्या और परिभाषिकी से ही दूसरी समस्याएं पैदा होती हैं। आधुनिक सभ्यता को गांधी जी 'शैतानी सभ्यता' कहते हैं। उनके अनुसार यह सभ्यता 'बिगाड़ करने' वाली है, जो मनुष्य को एक 'पुर्जा' मानती है। 26 जून 1910 को 'सोशलिस्ट हॉल' जोहान्सिबर्ग में गांधी जी ने अपने भाषण में आधुनिक सभ्यता और प्राचीन सभ्यता की तुलना करते हुए कहा कि *"आधुनिक सभ्यता का सार दो बातों में आ जाता है एक तो है निरंतर भागदौड़ और दूसरा है देशकाल के व्यवधान को समाप्त करने का प्रयास। आधुनिक सभ्यता हमें भौतिक दृष्टिकोण देती है और हमारे विचारों को शरीर और शरीर सुख की वृद्धि के साधनों पर केन्द्रित करती है। हर्बर्ट स्पेन्सर ने संक्षेप में आधुनिक मनुष्य के बारे में कहा है कि उसका जीवन जटिल होता है जबकि असभ्य जीवन बिल्कुल सीधा सादा होता है। ट्रांसवाल में एशियाइयों के आंदोलन का मूल कारण तो यही है कि एशियाइयों की जरूरतें बहुत सीधी सादी हैं, और इसके विपरीत यूरोपियों की जरूरतें विविध और इसी कारण खर्चीली हैं।... जो वतनी अपेक्षाकृत सभ्य बन गये हैं उन्हें तो बड़ा ठाटबाट चाहिए। इस तरह उन्हें ज्यादा पैसे की जरूरत पड़ती है और जब वे देखते हैं कि वे पैसा ईमानदारी से नहीं कमा सकते तो बेईमानी करते हैं।"*[5]

गांधी जी 'अतिशय भोग' और 'शरीर सुख' को निम्न श्रेणी की प्रवृत्ति मानते हैं। इसी प्रवृत्ति के वशीभूत होकर मनुष्य ऊंची प्रवृत्तियों से विमुख होता चला जाता है। अतिशय भोग के लिए अधिक उत्पादन को बढ़ावा मिलता है। अधिक उत्पादन के लिए आधुनिक तकनीक (मशीनीकरण) का सहारा लिया जाता है। गांधी जी के अनुसार मनुष्य को जीवन की न्यूनतम सुविधाओं के साथ जीने की आदत डालनी चाहिए। न्यूनतम सुविधा ही मनुष्य का 'हक' है, इससे अधिक का चाहना एक तरह से 'चोरी' है। आधुनिक सभ्यता मनुष्य की जरूरतों को पूरा ही नहीं करती वरन उसकी जरूरतों को बढ़ाती भी है। गांधी जी इस आधुनिक सभ्यता के बरक्स प्राचीन सभ्यता को महत्वपूर्ण मानते हैं। इसमें मनुष्य का ध्यान ऊंची प्रवृत्तियों, ईश्वर के प्रति प्रेम, पड़ोसियों के प्रति शिष्टता का भाव प्रमुख था। 26 जून 1910 को जोहान्सिबर्ग में गांधी जी द्वारा दिये गये भाषण की संक्षिप्त रिपोर्ट *'इंडियन ओपिनियन'*

(2-7-1910) में इस तरह छपी : *"आधुनिक सभ्यता के लक्षण हैं स्थान और काल के व्यवधान को समाप्त करने का प्रयत्न और शरीर की बेहद चिन्ता। आधुनिक जीवन की भाग दौड़ में उच्च विचारों के लिए समय ही नहीं बचता।... प्राचीन सभ्यता में आत्मा को शरीर से अधिक महत्व दिया गया है। यह प्रेम के बल पर आधारित है। यह स्पर्धा की घृणित भावना से दूर रहती है। और यह आधुनिक शहरी जीवन की अपेक्षा गांव के जीवन में अधिक अच्छी तरह विकसित होती है।"*[6]

गांधी जी आधुनिक सभ्यता की आलोचना प्राचीन सभ्यता के आलोक में करते हैं। बहुतों को ऐसा लग सकता है कि यहां गांधी जी के विचार पुरातनपंथी हैं। वे 'हिन्द स्वराज' में बीते हुए युग में लौट जाने का आह्वान कर रहे हैं। किन्तु ऐसा नहीं हैं। सचेत मन से 'हिन्द स्वराज' के 'पाठ' का विश्लेषण किया जाय तो हम वह धरातल पा सकते हैं जहां खड़े होकर गांधी जी यूरोपियन सभ्यता को देख रहे थे। यही नहीं उस समय भी जो सचेत थे जैसे टॉलस्टॉय, वे गांधी जी के निहितार्थों को समझ रहे थे। प्राचीन सभ्यता में मनुष्य के श्रेष्ठ गुणों को महत्व प्राप्त था। इसके उलट आधुनिक सभ्यता व्यक्ति के व्यक्तिगत हितों, स्वार्थों और उपलब्धियों को महत्व देती है। प्राचीन और आधुनिक सभ्यता का प्रश्न एक तरह से सार्वजनिक और व्यक्तिगत के सवाल से जुड़ता है। जो सभ्यता मनुष्य के भीतर श्रेष्ठ मानवीय गुणों का विकास न कर सके, 'स्व' का विस्तार न कर सके, शरीर के स्थूल स्तर से आगे बढ़ कर आत्मा के सूक्ष्म स्तर तक यात्रा न कर सके, वह *'सभ्यता तो अधर्म है, और यह यूरोप में इस हद तक फैल गयी है कि वहां के लोग अर्द्ध विक्षिप्त से दिखाई देते हैं। उनमें सच्ची शक्ति नहीं है; अपनी शक्ति वे नशे के बल पर कायम करते है। एकांत में वे बैठ ही नहीं सकते।'*[7]

यहां गांधी जी एक महत्वपूर्ण बात कहते हैं कि 'एकांत में वे बैठ ही नहीं सकते'। यह मनोविज्ञान सिद्ध तथ्य है। स्वस्थ व्यक्ति ही एकांत में बैठ सकता है, स्वस्थ अर्थात जिसका चित्त स्व में स्थित हो, यदि ऐसा नहीं है तो उसे ही अस्वस्थ कहते हैं। अस्वस्थ के लिए मराठी भाषा में 'बेचैन' शब्द है। आधुनिक सभ्यता और उससे नियंत्रित जीवनशैली ने अत्यधिक सुख का छलावा देकर लोगों को बेचैन कर दिया है। उनमें आत्मिक शांति का अभाव है। आत्मिक शांति से युक्त व्यक्ति ही एकांत में बैठ सकता है। गांधी जी उस मर्म को पहचान रहे थे। प्रतिदिन की बेतहाशा भाग दौड़ और इंद्रिय सुख में आत्मिक शांति कब की खत्म हो चुकी है। गांधी जी के लिए आत्मिक शांति की कसौटी है नैतिकता। जीवन और जगत के सभी संदर्भो में नैतिकता का पालन होना चाहिए। नैतिक धरातल को छोड़ कर मनुष्य स्वयं के लिए भी और समाज के लिए भी मुश्किलें खड़ी करता है। प्रसिद्ध दार्शनिक कांट ने भी 'सुख की धारणा' (Principle of pleasure) को महत्व नहीं दिया। उनके अनुसार *"नैतिकता स्वयंसिद्ध है, क्योंकि उसका विरोधी आचरण यदि सार्वभौम स्तर पर स्वीकार कर लिया जाय तो पूरी मानवजाति और दुनिया नष्ट हो जायेगी। इसलिए नैतिकता का पालन करने के लिए कष्ट भी उठाना पड़े तो श्रेयस्कर है।... नैतिकता का अर्थ ऐसे व्यक्तिगत आचरण से है जिसको सार्वभौमिक मान लिए जाने पर समाज का विकास होता रहे। इसलिए नैतिक आचरण प्रत्येक व्यक्ति का उत्तरदायित्व है और इससे बचने के लिए वह किसी भी बहाने का इस्तेमाल नहीं कर सकता।"*[8]

दूसरी बात गांधी जी यह कहते हैं कि *'उनमें सच्ची शक्ति नहीं है; अपनी शक्ति वे नशे के बल पर कायम करते हैं'।* गांधी जी यूरोप के लोगों के जिस 'नशे' की बात कर रहे हैं वह आधुनिक सभ्यता, और उससे नियंत्रित पूंजीवादी, साम्राज्यवादी शक्ति का नशा है। एक तरह से वह पाश्चात्य आत्म श्रेष्ठता की वह ग्रंथि है जिसके बल पर वे समस्त दुनिया को सभ्य बनाने निकले हैं। इस प्रक्रिया में सबसे पहले सभ्यता, संस्कृति और इतिहास की नयी व्याख्याएं प्रस्तुत की जाती हैं। गांधी जी कहते है कि *"आजकल तो इतिहास की शिक्षा जानबूझ कर इस तरह दी जाती है जिससे गलत ख्याल पैदा हो, इसलिए अंग्रेजों के आने के पहले के काल का बहुत बुरा चित्र खींचा जाता है और अंग्रेजी राज्य के प्रति जनता मोह मूर्छा में पड़ी रहे इसकी बचपन से ही कोशिश की जाती है। इसमें असत्य ही नहीं*

बेईमानी भी है।"[9]

अंग्रेज जिस नशे के बल पर अपनी शक्ति कायम कर रहे थे उस कुचक्र को गांधी जी भलीभांति समझ रहे थे। रामविलास शर्मा कहते हैं कि *"भारत में जो शोषण सबसे ज्यादा प्रच्छन्न है, वह साम्राज्यवादी है। इसकी ठोस जांच पड़ताल करना बहुत जरूरी है। भारतीय इतिहास के विवेचन का सीधा सम्बंध इस पेचीदा और प्रच्छन्न साम्राज्यवादी शोषण से है।"*[10]

'हिन्द स्वराज' में जिस पश्चिमी आत्मश्रेष्ठता और शोषण की प्रवृत्ति को गांधी जी प्रश्नांकित कर रहे थे उसी को एडवर्ड सईद ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'ओरियंटलिज्म' (1978) में विस्तार से व्याख्यायित किया है। 'ओरियंटलिज्म' वास्तव में शक्तिहीनों और शक्तिसम्पन्नों के आपसी सम्बंधों का अध्ययन है जो यह साबित करता है कि शक्ति सम्पन्न पश्चिम ने शक्तिहीन पूर्व के साथ कितना अपमानजनक व्यवहार किया है। *"पूर्व को पश्चिमी समाज के कुछ ऐसे तत्वों (बाल अपराध, विक्षिप्त, स्त्री, निर्धन) से जोड़ा जाता था जिनकी उभयनिष्ठ समानता का सर्वोत्तम सटीक नाम हो सकता है घटिया दर्जे का विजातीय।"*[11] यह पौर्वात्यवादी दृष्टिकोण हमेशा से काम करता रहा है। चाहे वह इतिहास की दृष्टि हो या संस्कृति और सभ्यता की दृष्टि।

'हिन्द स्वराज' में सभ्यता को लेकर जो दुःस्वप्न गांधी जी को सता रहा है वह है मनुष्य का शरीर सुख और भोगवाद के चक्र में फंस जाना। आज पश्चिमी सभ्यता के बुद्धिजीवी अपनी सर्वकालिक महान सभ्यता की समस्त उपलब्धियों के बावूजद 'इतिहास के अंत' की घोषणा और 'सभ्यताओं के संघर्ष' तक की यात्रा कर चुके हैं। वैज्ञानिक उपलब्धियों के सहारे प्रकृति पर शासन करने की कोशिश में पर्यावरण का क्षरण हुआ। प्राकृतिक रहस्य को जानने की जिज्ञासा से मनुष्य की पहचान का संकट उत्पन्न हुआ। अतिशय उत्पादन के लिए तकनीक (मशीन) पर मनुष्य आश्रित होता गया। फिर मशीन ने मनुष्य को स्थानांतरित कर दिया या फिर उसे मशीन (संवेदनारहित) में बदल दिया। मनुष्य और मशीन के इस सम्बंध को चार्ली चैपलिन की फिल्म 'द मार्डन टाइम' बहुत ही मार्मिक ढंग से व्यक्त करती है। इन समस्याओं के समाधान के लिए आज पश्चिमी बुद्धिजीवी परिभाषाओं और स्थापनाओं के नये 'मूलवादी आग्रह (फंडामेण्टलिस्ट एसर्सन) की तरफ बढ़ने लगे हैं। इन नव्य पौर्वात्यवादी मूलवादियों में 'सेमुअल हटिंगटन' और 'फूकोयामा' हैं। इन दोनों के चिन्तन में उसी पश्चिमी आत्म श्रेष्ठता और आधुनिक सभ्यता का वर्चस्व है, जिसे आज से सौ साल पहले गांधी जी 'शैतानी सभ्यता' कह आये थे। जिस आधुनिक सभ्यता और उसकी उपलब्धि पर कभी समस्त यूरोप को अभिमान था और उसी के बल पर वे एशिया और अफ्रीका के देशों को सभ्य बनाने निकले थे; जो सभ्यता इतिहास निर्माता मानी जाती थी, उस सभ्यता के बौद्धिक इतिहास के अंत की विभाजित नियति तथा आर्थिक मंदी जैसे वैचारिक और भौतिक संकटों में बुरी तरह से उलझ गये हैं।

इन सभी संदर्भों में हिन्द स्वराज की स्थापनाओं का महत्व और गांधी जी की दूरदर्शिता का सहज अध्ययन किया जा सकता है। आधुनिक सभ्यता की उपभोक्तावादी मानसिकता ने मनुष्य को एकायामी बना दिया है। गांधी जी के अनुसार नैतिकता, प्रेम, अहिंसा और सत्य को छोड़ कर भौतिक समृद्धि और वैयक्तिक सुख को महत्व देने वाली सभ्यता विनाशकारी है। दो विश्वयुद्धों से होकर गुजरती यह सभ्यता, जल, जंगल, जमीन जैसे बुनियादी अधिकारों से मनुष्य को वंचित करती हुई आज परमाण ु बम के ऊपर बैठी है। अंधेरे में एकरेखीय मार्ग पर बढ़ती हुई पाश्चात्य सभ्यता सभी चीजों के अंत की घोषणा के साथ हतप्रभ खड़ी है।

गांधी जी जब आधुनिक सभ्यता की आलोचना करते हैं तो उनके तर्क कोई जटिल दार्शनिक तथ्य न होकर अति सरल और सामान्य होते हैं। एक बहुत ही सामान्य घटना का जिक्र करते हुए आधुनिक सभ्यता की आलोचना वे बड़े ही प्रभावशाली लहजे में कर देते थे। उनकी निगाह बहुत ही छोटी छोटी बातों पर भी होती थी। 4 जुलाई 1910 को रेनों में जेफरीज और जॉनसन के बीच हुई

तद्भव

घूंसेबाजी के मैच का उल्लेख करते हुए गांधी जी ने लिखा कि *''एक हब्शी और अंग्रेज के इस मैच के पीछे अमरीकी पागल हो गये थे। बड़ी संख्या में लोग तमाशा देखने आये। अमरीका सभ्य देश माना जाता है। परंतु इस बर्बर खेल में सभ्यता कहां? यह तो जंगलीपन की हद है। जेफरीज और जॉनसन के शरीर कितने ही मजबूत हों, फिर भी एक क्षण में मिट्टी में मिल जायेंगे। तब वे किसी काम में नहीं आयेंगे। शायद यह सीधा सादा और अच्छा ख्याल लाखों तमाशबीनों के दिमाग में सपने में भी नहीं आया होगा।''* [12]

जेफरीज और जॉनसन के मैच के सम्बंध में गांधी जी की यह टिप्पणी उनकी सभ्यता दृष्टि की सूक्ष्मता और व्याप्ति का बेजोड़ उदाहरण है, तो वहीं डब्ल्यू.डब्ल्यू.एफ. के प्रायोजित और हिंसक खेल में मनोरंजन के नये मजहब तलाशते लोगों और उनकी सभ्यता पर एक बड़ा सवाल भी है।

गांधी जी 'हिन्द स्वराज' में आज से सौ साल पहले जितने समीचीन थे उससे अधिक आज प्रासंगिक हैं। गांधी जी पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सभ्यता के द्वारा थोपे जा रहे, प्रभुत्व, हिंसा, वर्चस्व और सांस्कृतिक दासता का विरोध किया। साथ ही भारतीय जनमानस में फैले 'अंग्रेजी माईबाप','अंग्रेज राय बहादुर' जैसे वर्चस्व और प्रभुत्व के विशेषणों को चुनौती दी। अंग्रेजों के श्रेष्ठता के लगभग सभी मुहावरों को गांधी जी ने ध्वस्त किया।

गांधी जी पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भारत पर अंग्रेजों के शासन के पीछे अंग्रेजों के श्रेष्ठ होने को नहीं बल्कि हम भारतीयों के कमजोर होने को उत्तरदायी माना था। वे भारतीय जनमानस से अंग्रेजी श्रेष्ठता का भूत उतारने का कार्य कर रहे थे। 'हिन्द स्वराज' के 'हिन्दुस्तान कैसे गया' अध्याय में गांधी जी लिखते हैं कि *''भारत को अंग्रेजों ने लिया हो सो बात नहीं, हमने उन्हें अपना देश दिया है। वे यहां अपने बल से नहीं टिके, बल्कि हमने उन्हें टिका रखा है।... कम्पनी के लोगों की मदद किसने की? कौन उनकी चांदी देख कर लुभा जाता था? इतिहास साक्षी है कि वह सब हम ही करते थे। फौरन धनवान बन जाने की नीयत से हम उनका स्वागत करते थे, उनकी मदद करते थे।''* [13]

गांधी जी यहां उस मूल तथ्य की और संकेत कर रहे थे जो अंग्रेजी शासन का आधार था। अंग्रेज शासन के मूल में उनकी शक्ति नहीं हमारी कायरता है। यही वह खास कार्य है जो गांधी जी ने 'हिन्द स्वराज' के माध्यम से किया, अर्थात भारतीय जनमानस में अंग्रेजों की सभ्यता आदि के प्रति जो एक प्रभुत्व और वर्चस्व बना हुआ था उसको तोड़ दिया। गांधी जी को इस बात पर अथाह विश्वास था कि मानसिक और सांस्कृतिक गुलामी से मुक्त जनता ही राजनैतिक और आर्थिक गुलामी के विरोध में खड़ी हो सकती है। गांधी जी आधुनिक सभ्यता और उसके द्वारा पोषित तकनीकी विकास के मॉडल पर सवाल खड़ा कर भारतीय जनता को उसी मानसिक और सांस्कृतिक गुलामी से मुक्त करने का उपक्रम कर रहे थे।

'हिन्द स्वराज' के माध्यम से गांधी जी ने हम भारत के लोगों को हमारा स्वाभिमान दिया था। वे 'हिन्द स्वराज' में भारत की आत्मा को समझने और उसे खोजने का कार्य कर रहे थे। हिन्द स्वराज के विचारों से असहमत लोगों के बारे में डब्ल्यू. जे. बायबर्ग को लिखे पत्र में गांधी जी कहते हैं कि *''सतही तौर पर पढ़ने वाला व्यक्ति इस पुस्तिका को राजद्रोहात्मक रचना समझेगा और मैं यह भी मानता हूं कि जो लोग मनुष्यों तथा उनके कार्यों के बीच आधुनिक सभ्यता और इसका प्रतिपादन करने वालों के बीच भेद नहीं करेंगे, वे इसी निष्कर्ष पर पहुंचेंगे।''* [14]

'हिन्द स्वराज' में गांधी जी ने आधुनिक सभ्यता की कड़ी आलोचना की, उसके पीछे एक उद्देश्य यह भी था कि अंग्रेजों द्वारा थोपे गये सांस्कृतिक दासता के विकल्प के रूप में एक सांस्कृतिक स्वराज की रूपरेखा बनायी जाय। उससे यह भ्रम पैदा हो गया कि गांधी जी आदिम व्यवस्था या आदिम सांस्कृतिक जीवन की और लौटना चाहते हैं। दरअसल यह भ्रम वास्तविक नहीं उस 'सतही तौर पर पढ़ने वाले' व्यक्ति की सतही दृष्टि का है जिसका उल्लेख गांधी जी ने बायबर्ग को लिखे पत्र में किया

था। जी.डी.एच. कोल ने स्वीकार किया है कि *"तीस वर्ष पहले की अपेक्षा आज लगता है कि गांधी ने पाश्चात्य सभ्यता के विरुद्ध बहुत सही कहा।"*[15]

गांधी जी को पाश्चात्य (आधुनिक) सभ्यता के बरक्स भारतीय सनातन संस्कृति के प्रमुख गुण दया, करुणा, आत्मबल तथा सत्याग्रह पर पूरा भरोसा था। यही वे गुण हैं जो इतिहास निर्माण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हिन्दुस्तानी सभ्यता सत्याग्रह या आत्मबल या करुणा बल के सहारे आज तक टिकी हुई है। गांधी जी 'हिन्द स्वराज' के माध्यम से उसी का आह्वान करते हैं। गांधी जी कहते हैं : *"बहुत से अक्ल देने वाले आते जाते रहते हैं, मगर हिन्दुस्तान अपनी जगह अडिग बना रहता है। यह उसका लंगर है।"*[16]

यही वह ताकत है जिसके चलते 'हिन्द स्वराज' में गांधी जी ने उस समस्त यूरोपियन सभ्यता और उसकी आधुनिक उपलब्धियों को चुनौती दी।

आज की विश्व सभ्यता (?) और विकास (?) अपनी महत्वाकांक्षी परियोजनाओं के साथ मूलवादी आग्रहों के दो छोरों पर खड़ी है। एक छोर पर नव साम्राज्यवादी और पौर्वात्यवादी मूलवाद है तो दूसरे छोर पर मदांध धर्मवादी मूलवाद है। ऐसे में गांधी दृष्टि और विचार की तर्कसम्मत और विवेकसम्मत व्याख्या की जरूरत और अधिक हो गयी है, क्योंकि आगे का रास्ता अब यहीं से निकलेगा।

देर से ही सही पर अब भी अगर गांधी जी की विरासत को हम नये संदर्भों में धारण कर सकें तो यह एक ऐतिहासिक और निर्णायक कदम होगा।

संदर्भ

1. गांधी वाङ्मय, भाग-10, नवजीवन प्रेस ट्रस्ट, अहमदाबाद, 1964, पृ.-261
2. वही, पृ.-261
3. इंडियन ओपिनियन, 7-5-1910
4. गांधी वाङ्मय, भाग-10, नवजीवन प्रेस ट्रस्ट, अहमदाबाद, 1964, पृ.-19-20
5. वही, पृ.-117
6. इंडियन ओपिनियन, 2-7-1910
7. गांधी वाङ्मय, भाग-10, नवजीवन प्रेस ट्रस्ट, अहमदाबाद, 1964, पृ.-140
8. नंदकिशोर आचार्य, *आधुनिक विचार*, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 1998, पृ.-45
9. किशोर मशदबाला, *गांधी विचार दोहन*, पृ.-162-163
10. रामविलास शर्मा, *मार्क्स और पिछड़े हुए समाज*, पृ.-295
11. एडवर्ड सईद, आरियंटलिज्म, पृ.-207
12. इंडियन ओपिनियन, 23 जुलाई, 1910
13. गांधी वांगमय, भाग-10, नवजीवन प्रेस ट्रस्ट, अहमदाबाद, 1964, पृ.-20-21
14. इंडियन ओपिनियन, 21 मई, 1910
15. सलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी, खंड-5, सलेक्टेड लेटर्स, अहमदाबाद, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, 1997, पृ.-124
16. महात्मा गांधी, हिन्द स्वराज, पृ.-42

तद्भव